मुख्य बिंदु

तीन तरह के सुख और ध्यान का आनंद

अब सूत्र :

और हे अर्जुन, अब सुख भी तू तीन प्रकार का मुझसे सुन। हे भरतश्रेष्ठ, जिस सुख में साधक पुरुष ध्यान, उपासना और सेवादि के अभ्यास से स्मरण करता है और दुखों के अंत को प्राप्त होता है, वह सुख प्रथम साधन के आरंभ काल में यद्यपि विष के समान भासता है, परंतु परिणाम में अमृत-तुल्य है। इसलिए जो आत्मबुद्धि के प्रसाद से उत्पन्न हुआ सुख है, वह सात्विक कहा गया है।

और जो सुख विषय और इंद्रियों के संयोग से होता है, वह यद्यपि भोग काल में अमृत के सदृश भासता है, परंतु परिणाम में विष सदृश है, इसलिए वह सुख राजस कहा गया है।

तथा जो सुख भोग काल में और परिणाम में भी आत्मा को मोहने वाला है, वह निद्रा, आलस्य और प्रमाद से उत्पन्न हुआ सुख तामस कहा गया है।

और हे अर्जुन, पृथ्वी में या स्वर्ग में अथवा देवताओं में ऐसा वह कोई भी प्राणी नहीं है कि जो इन प्रकृति से उत्पन्न हुए तीनों गुणों से रहित हो।

तामसिक सुख से प्रांरभ करें।

जो सुख भोग काल में और परिणाम में भी आत्मा को मोहने वाला है...।

मूर्च्छित करने वाला है, जिसका गुण शराब जैसा है, जिससे चैतन्य खोता है; जिससे समझ तिरोहित होती है, ढंकती है; जिसमें भीतर की प्रज्ञा पर राख जम जाती है। जिससे तुम ऐसा व्यवहार करने लगते हो, जैसा तुम भी होश के क्षणों में सोच न सकते थे कि करोगे।

तुम ऐसे आच्छादित हो जाते हो मूर्च्छा से, जैसे शराबी गालियां बकने लगता है, रास्ते पर उलटा-सीधा चलने लगता है और सुबह उठकर उसे याद भी नहीं रहती कि मैंने क्या किया। और सुबह तुम उसे कहो कि तुमने ऐसा-ऐसा व्यवहार किया, तो वह कहेगा, क्या मैं पागल हूं! ऐसा मैं कैसे कर सकता हूं।

जो सुख भोग-काल में और परिणाम में भी आत्मा को मोहने वाला है...।

सुख को भोगते समय भी जो मनुष्य को मूर्च्छित करता है और परिणामतः भी, अंततः भी जो अपने पीछे मूर्च्छा को ही छोड़ जाता है।

निद्रा, आलस्य और प्रमाद से उत्पन्न हुआ..।

ऐसा सुख निद्रा से उत्पन्न होता है, आलस्य से उत्पन्न होता है, प्रमाद से उत्पन्न होता है।

उसे तामस कहा गया है।

तुम्हारे जीवन में कुछ सुख हैं, जो आलस्य से, प्रमाद से और निद्रा से उत्पन्न होते हैं। उन सुखों को वस्तुतः सुख कहना ठीक नहीं हैं, क्योंकि उनका आत्यंतिक परिणाम महादुख में ले जाना है। लेकिन वे प्रतीत तो सुख जैसे होते हैं।

एक आदमी ने ज्यादा खाना खा लिया है। खाना खाते वक्त कितना ही सुखद मालूम पड़े, दुखद है। शरीर का संतुलन खो जाएगा। शरीर पर बोझ पड़ेगा, मूर्च्छा होगी, आलस्य बढ़ेगा। यह आदमी पड़ा रहेगा घंटों तंद्रा में। और तब भी उठकर यह न पाएगा, ऊर्जस्वी हुआ, सतेज हुआ, शक्ति जागी। तब भी ऐसा ही पाएगा, धुंध-धुंध से घिरा, ढंका-ढंका, मरा-मरा, जीवंत नहीं।

एक उदासी ऐसे आदमी को घेरे रहेगी। चलेगा, तो जबरदस्ती, जैसे धकाया जा रहा है। करेगा कुछ, तो मजबूरी में। लेकिन प्राण में कोई प्रफुल्लता न होगी। ऐसे व्यक्ति के जीवन में रात ही रात रहेगी, सुबह का सूरज उगता ही नहीं। ऐसा व्यक्ति ज्यादा खाएगा, ज्यादा सोएगा, नशे खोजेगा।

और उसका रस हमेशा इस बात में होगा कि जहां भी किन्हीं कारणों से

होश खो जाए, वहीं उसे सुख मालूम पड़ेगा। सिनेमा में बैठ जाएगा तीन घंटे के लिए, ताकि होश खो जाए। उसकी चेष्टा होगी मूर्च्छा की तलाश की। जिन चीजों में भी जागरण आता है, वहां उसे रस न आएगा। उसकी आकांक्षा यह है कि अगर वह सदा सोया रहे, तो बड़ा सुखी होगा।

इसका बहुत गहरा अर्थ क्या हुआ? इसका गहरा अर्थ हुआ, यह आदमी जीना ही नहीं चाहता, यह आदमी मरना चाहता है। यह मरे-मरे जीना चाहता है। नींद छोटी मौत है। मूर्च्छा अपने हाथ से बुलाई गई मौत है।

ऐसा आदमी यह कह रहा है कि परमात्मा तुझसे मुझे बड़ी शिकायत है कि तूने मुझे जीवन दिया। यह आदमी चाहता है कि कब्र में ही पड़ा रहे, तो अच्छा है। इसका जीवन करीब-करीब कब्र में ही जीया जाएगा। और इसको यह समझता है सुख।

इसे पता ही नहीं है कि महासुख संभव था, इसने आंख ही न खोली। बड़े सुख के बादल घिरे थे, इसने झोली ही न फैलाई। सूरज ऊगा था, यह आंख बंद किए बैठा रहा। चारों तरफ जीवन नृत्य कर रहा था, परमात्मा का उत्सव था, यह सम्मिलित न हुआ।

तामस सुख, भोग काल में और परिणाम में भी आत्मा को मोहने वाला है। मोह यानी मूर्च्छा, मोह यानी शराब।

तो तुम अपने सुखों में खोज करना। अगर तुम्हारा सुख ऐसा हो कि नींद में ही सुख आता हो, ज्यादा खाना खा लेने में सुख आता हो, शराब पीने में सुख आता हो। बस, किसी भी तरह अपने को भूल जाएं कहीं, इसमें सुख आता हो। कामवासना में सुख आता हो। तो समझना कि ये सब तामस सुख हैं। ये तुम्हें और-और गहरे नरक में ले जाएंगे। इनसे तुम जीवन के आरोहण को उपलब्ध न होओगे; जीवन का सोपान न चढ़ोगे। इनसे तुम नीचे गिरोगे। तुम मनुष्य जीवन का ठीक-ठीक उपयोग ही नहीं कर पा रहे हो। अक्सर ऐसे ही खोया जाता है।

वह निद्रा, आलस्य और प्रमाद से उत्पन्न हुआ सुख तामस कहा गया है। और जो सुख विषय और इंद्रियों के संयोग से होता है...।

ऐसा समझ लें कि भीतर दीया जल रहा है चेतना का। तामस सुख ऐसा है, जैसे दीए के चारों तरफ अंधेरे को इकट्ठा कर लो और अंधेरे में ही सुख पाओ। दिन दुख दे, रात में ही सुख पाओ।

तो जिन समाजों में तामस सुख बढ़ जाता है, उनमें लोगों का रात्रि-जीवन बड़ा महत्वपूर्ण हो जाता है। दिनभर तो वे किसी तरह गुजारते हैं। रात के लिए क्लब, होटल, सिनेमाघर, थियेटर, नाच, वेश्या; रात का ही जीवन महत्वपूर्ण हो जाता है। दिन तो उन्हें व्यर्थ मालूम पड़ता है, रात में ही सार्थकता दिखाई पड़ती है। अंधकार कीमती मालूम पड़ता है।

अगर इस तरह के लोग उपनिषद लिखें, तो वे कहेंगे, हे परमात्मा, हमें प्रकाश से अंधकार की तरफ ले चल; जीवन से मृत्यु की तरफ ले चल। अमृत हम नहीं चाहते, हमें मृत्यु दे। उनकी यही प्रार्थना है।

जो सुख विषय और इंद्रियों के संयोग से होता है...।

फिर, चेतना का दीया जल रहा है। कुछ लोग उसके आस-पास के अंधेरे में ही सुख पाते है। उन्हें पूरा सुख तो तभी मिलेगा, अगर दीया बिलकुल बुझ जाए, अंधेरा ही अंधेरा रह जाए। ऐसे तामस से भरे व्यक्ति कभी-कभी आत्महत्या में भी सुख पाते है; अपने को मिटा लेने में भी सुख पाते हैं। क्योंकि तब उन्हें पूरा विश्वास हो जाता है। सुबह न तो घड़ी का अलार्म उठा सकेगा, न ब्रह्ममुहूर्त के पक्षी जगा सकेंगे, न मंदिरों की बजती हुई घंटों की आवाज, न चर्च, न मस्जिद की अजान परेशान करेगी। खो गए, झंझट से बाहर हुए।

आत्मघातियों में बड़ा वर्ग तामसियों का होता है। वे जीवन को इनकार कर रहे हैं। एक परम प्रसाद था परमात्मा का, उसको इन्होंने इनकार कर दिया।

दूसरा सुख है, तामसी सुख के बाद राजसी सुख। यह इंद्रियों और विषयों के संयोग से उत्पन्न होता है।

चैतन्य का दीया जल रहा है। अगर इसके पास अंधेरे में सुख लेते हो, तो तामसी। अगर इस चैतन्य के दीए का सुख सीधा नहीं लेते, इंद्रियों के माध्यम से, शरीर के माध्यम से, भोग के माध्यम से लेते हो, तो सुख राजसी है। और अगर इस दीए की ज्योति का सुख दीए की ज्योति के ही कारण लेते हो, बिना किसी माध्यम के—न इंद्रियों का माध्यम, न विषय का माध्यम, न शरीर का, न मन का—सीधे इस प्रकाश में ही आल्हादित होते हो, तो सात्विक।

जो सुख विषय और इंद्रियों के संयोग से होता है, वह भोग काल में अमृत के सदृश मालूम पड़ता हैं, परंतु परिणाम में जहर की भांति है...।

इंद्रियों के सभी सुख भोगते समय सुखद मालूम पड़ते हैं, भोगते ही दुख बन जाते हैं। धोखा है।

कामवासना सुख देती मालूम पड़ती है। गई भी नहीं, कि पीछे विषाद, पीड़ा, थकापन, हारापन। और एक आत्मग्लानि पकड़ लेती है कि फिर वही नासमझी की, जिसका कोई मूल्य नहीं है, जो कहीं पहुंचाती नहीं है, जिससे कभी कोई कहीं गया नहीं है। फिर एक बार उसी गड्ढे में गिरे।

संभोग के बाद ऐसा आदमी खोजना मुश्किल है, ऐसी स्त्री खोजनी मुश्किल हैं, जिसे आत्मग्लानि का स्वर सुनाई न पड़ता हो। अगर न सुनाई पड़ता हो, तो समझना कि उसका सुख तामसी है। तब कामवासना भी सिर्फ अंधेरे में खो जाने का उपाय है। अगर यह ग्लानि का स्वर सुनाई पड़ता हो संभोग के बाद, तो समझना कि सुख राजसी है।

सभी सुख, इंद्रियों के माध्यम से जो लिए गए हैं, वे क्षणभंगुर होंगे। वे ऐसे ही होंगे, जैसे रास्ते पर चलते वक्त अचानक एक तेज प्रकाश वाली कार पास से गुजर जाए। एक क्षण लगेगा, फिर गहन अंधेरा हो जाएगा। अंधेरा पहले से भी ज्यादा अंधेरा हो जाएगा। इतना अंधेरा पहले भी नहीं था। इस प्रकाश ने आंखें चौंधिया दी।

इंद्रियों से मिले सुख और भी गहरे अंधेरे की प्रतीति करवाते हैं सुख के बाद। इसलिए मिलते समय तो अमृत जैसा मालूम होता है, परिणाम में विष जैसा मालूम होता है।

और वह सुख जिसमें साधक पुरुष ध्यान, उपासना और सेवादि के ण

अभ्यास से स्मरण करता है और दुखों के अंत को प्राप्त होता है, वह सुख प्रथम साधन के प्रारंभ काल में विष के समान और परिणाम में अमृत के तुल्य है।

ठीक राजस से उलटी दशा सात्विक की है। प्रारंभ में तो दुखद मालूम होगा। सभी तपश्चर्या दुख मालूम होती है। ध्यान करो, प्रार्थना करो, पूजा करो, ऐसा लगता है कि कोई सुख नहीं है। लेकिन जो कर गुजरते हैं, वे महासुख के अधिकारी हो जाते है।

ध्यान करो, कोई सुख नहीं सुनाई पड़ता कहीं भी। ऐसा लगता है, समय व्यर्थ गंवा रहे हो। पैर दुखते हैं, चीटियां काटती हैं, मच्छर सताते हैं, हजार तरह के मन में विचार उठते हैं, कल्प-विकल्प का तूफान उठ जाता है। इससे तो वैसे ही बेहतर थे, इतना उपद्रव नहीं होता था। गौर से खोजते हो, पैर के पास चींटी है ही नहीं, लेकिन काटना मालूम पड़ता है। कहीं शरीर खुजलाता है। ये सब के सब उपद्रव खड़े हो जाते हैं। बड़ा कठिन मालूम पड़ता हैं। एक चालीस मिनट शांत बैठना बड़ा दुखद मालूम पड़ता है।

तपश्चर्या दुखद है, लेकिन उसके फल बड़े मीठे हैं। सात्विक सुख प्रारंभ में तो दुखपूर्ण और अंत में महासुख।

अब समझें। सात्विक सुख राजस के विपरीत है इस अर्थों में कि उसका माध्यम इंद्रियां नहीं हैं। उसका माध्यम है ही नही। वह ध्यान, उपासना और सेवादि में अभ्यास के रमण से उत्पन्न होता है। वह तुम्हारे चैतन्य का स्वभाव ही है। तुम उसे किसी माध्यम से उपलब्ध नहीं करते।

ध्यान में क्या माध्यम है? ध्यान का अर्थ है, तुम खाली होकर बैठे रहे। धीरे-धीरे अगर तुमने हिम्मत रखी और बैठते ही गए, बैठते ही गए, एक दिन ऐसा आएगा कि विचार खो जाएंगे। तुम अकेले छूट जाओगे। उस दिन उस एकांत क्षण में, उस मौन में, कहीं से कोई संबंध न रह जाएगा। भीतर ही झरने फूटने लगेंगे। भीतर ही कोई नई सुगबुगाहट, कोई नई तरंग तुम्हें डुबा लेगी। भीतर ही लहरें आने लगेगी। और ये लहरें भीतर की ही हैं, बाहर से नहीं आती।

सात्विक सुख तुम्हारे भीतर से ही आता है। तामसिक सुख तुम अपने भीतर के दीए को बुझाकर पाते हो। राजसिक सुख तुम इंद्रियों और शरीर के माध्यम से खोजते हो।

सात्विक सुख राजसिक सुख से विपरीत है, क्योंकि इंद्रियों का कोई माध्यम नहीं हैं। इसलिए भी विपरीत है कि राजसिक सुख में पहले तो सुख मिलता, फिर दुख। सात्विक सुख में पहले दुख मिलता, फिर सुख।

सात्विक सुख तामसिक सुख के विपरीत है। क्योंकि तामसिक सुख मूर्च्छा पर निर्भर है और सात्विक सुख अमूर्च्छा पर, ध्यान पर, उपासना पर, जागरण पर। तामसिक सुख शरीर की बोझिलता पर निर्भर है, आलस्य, प्रमाद। सात्विक सुख हलकेपन पर, जैसे पंख लग गए प्राणों को, जैसे तुम उड़ सकते हो आकाश में, ऐसे हलकेपन पर निर्भर है।

ये तीन तरह के सुख हैं।

और कृष्ण कहते हैं, पृथ्वी पर या स्वर्ग में ऐसा कोई प्राणी नहीं है, जो इन प्रकृति से उत्पन्न तीनों गुणों से रहित हो।

सभी प्राणी इन तीनों तरह के सुखों के बीच दबे हैं, पृथ्वी पर या स्वर्ग में। लेकिन कृष्ण के संबंध में क्या कहेंगे? कृष्ण तो पृथ्वी पर खड़े थे, जब यह कह रहे थे। क्या कृष्ण भी इन तीन तरह के सुखों में दबे हैं?

नहीं, जो इन तीनों को जान लेता है, वह तीनों के पार हो जाता है। उसको हमने तुरीय कहा है, चौथी अवस्था कहा है। वह गुणातीत हो जाता है।

लेकिन जैसे ही तुम गुणातीत हो जाते हो, दूसरों को तुम दिखाई पड़ते हो कि पृथ्वी पर हो, फिर तुम पृथ्वी पर नहीं हो। फिर तुम्हारे पैर पृथ्वी पर पड़ते हैं और नहीं भी पड़ते। फिर तुम यहां दिखाई भी पड़ते हो और यहां हो भी नहीं। फिर तुम प्राणी नहीं हो। तुम्हारी कोई सीमा नहीं है। तुम तो प्राण का स्रोत हो गए। तुम परमात्मा हो गए।

तीन तरह के सुख हैं, तीन तरह के सुखों में जो घिरा है, वह प्राणी है। तीन के जो पार हो गया, वह सृष्टि के पार हो गया, वह स्वयं स्रष्टा का अंग हो गया, गुणातीत हो गया।

इन तीनों सुखों को गौर से समझने की कोशिश करना। समझने का अर्थ है, अपने जीवन में परखने की कोशिश करना। तुम्हारा जीवन अभी तमस से भरा है, तो थोड़ा उठाओ अपने को रजस की तरफ। रजस से भरा है, तो उठाओ अपने को सत्व की तरफ। सत्व से भरा है, तो उठाओ अपने को गुणातीत की तरफ, क्योंकि गुणातीत मंजिल है।

सभी गुणों के जो पार हो गया, वह प्रकृति के पार हो गया। प्रकृति के पार हो जाना परमात्मा हो जाना है।

— **ओशो**

गीता दर्शन, भाग-आठ
अध्याय-18, प्रवचन-11, प्रश्न-4
(पूरा प्रवचन टेप पर भी उपलब्ध है)